समझ का विचार से कोई लेना-देना नहीं है। आप तब तक मीमांसा कर सकते हैं, जो कि विचार की, तर्क की, प्रक्रिया है, जब तक कि आप यह न कहने लगें, ''मेरी समझ में यह बात नहीं आ रही'' और तब आप मौन हो जाते हैं और तभी आपको दिखाई पड़ता है, ''आह, मेरी समझ में बात आ गयी।'' यह समझ विचार का नतीजा नहीं होती।

जे. कृष्णमूर्ति

जे. कृष्णमूर्ति परिसंवाद

जून 2008

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया का त्रैमासिक हिंदी पत्र
मार्च, जून, सितंबर एवं दिसंबर में प्रकाशित
वार्षिक शुल्कः रु. 100.00 आजीवन शुल्कः रु. 1000.00
संपादक : कृष्णनाथ
सहसंपादक : मुकेश

इस अंक में:

खंड : 1

हमें इस तरह शुरुआत करनी होगी
जैसे हमें कुछ भी पता नहीं है... 4

खंड : 2

सूचनाएं 30

हमें इस तरह शुरुआत करनी होगी जैसे हमें कुछ भी पता नहीं है...

नीडलमनः युवा पीढ़ी में आजकल आध्यात्मिक क्रांति की काफी अधिक चर्चा हो रही है, खासकर कैलीफोर्निया में। इस सबके बीच क्या आपको आधुनिक सभ्यता के नवीन जागरण की कोई आशा दिखाई पड़ती है, विकास की कोई नयी संभावना नज़र आती है?

कृष्णमूर्तिः क्या आपको ऐसा नहीं लगता, सर, कि विकास की नयी संभावना के लिए हमें काफी गंभीर होने की ज़रूरत है, न कि एक चमत्कारी मनोरंजन से दूसरे चमत्कारी मनोरंजन के पीछे जाने की? विश्व में जितने धर्म हैं उनको अगर हमने ध्यान से देखा हो और उनकी संगठित व्यर्थता को महसूस किया हो और उस बोध के द्वारा हम कुछ ऐसा देख पाए हों जो वास्तविक है, स्पष्ट है, तब शायद कैलीफोर्निया में या विश्व में कुछ नया होने की संभावना है। लेकिन जहां तक मैंने महसूस किया है इन सबमें वैसी गंभीरता दिखाई नहीं पड़ती। मैं गलत भी हो सकता हूं क्योंकि मैं उन युवाओं को दूर से ही, श्रोताओं के बीच, कभी कभार देख पाता हूं, और उनके प्रश्नों, उनकी हंसी, उनकी तालियों की गड़गड़ाहट आदि को देखकर मुझे ऐसा नहीं लगता कि वे बहुत गंभीर, परिपक्व हैं या कोई गहरी मंशा लेकर आये हैं। स्वाभाविक है कि मैं गलत हो सकता हूं।

नीडलमनः मैं समझता हूं आप क्या कहना चाह रहे हैं। मेरा सवाल बस यही है कि शायद हम युवाओं से गंभीर होने की बहुत ज्यादा उम्मीद नहीं रख सकते।

कृष्णमूर्तिः इसलिए मुझे नहीं लगता कि यह बात युवाओं पर ही लागू होती है। पता नहीं क्यों युवाओं को लेकर इस

बात को इतना अहम बना दिया गया है। कुछ ही सालों में वे भी बुजुर्ग लोगों में शामिल हो जाएंगे।

नीडलमनः इस सबके पीछे जो कुछ भी हो लेकिन यदि एक घटना के तौर पर युवाओं में अनुभवातीत – या इसे जो भी कहें – में बढ़ती दिलचस्पी को देखा जाए तो लगता है कि एक ऐसी ज़मीन तैयार हो रही है जिसमें से कुछ असाधारण व्यक्तियों का, या शायद मास्टर्स का, प्रादुर्भाव हो सकता है। यहां हम बहुत बढ़चढ़कर बोलने वाले या धोखा देने वाले लोगों की बात नहीं कर रहे।

कृष्णमूर्तिः पर मुझे इस बात का यकीन नहीं कि धोखा देने वाले और शोषण करने वाले इन हालात का फायदा नहीं उठा रहे। 'कृष्णा कॉन्शसनेस' या 'ट्रान्सेंडेंटल मेडिटेशन' और इस तरह की बकवास जो चल रही है, और लोग उसमें फंस गये हैं। नुमाइश का ही यह एक रूप है, मनोरंजन का, दिल बहलाने का एक तरीका है। पर कुछ नया घटित होने के लिए ऐसे लोगों का केंद्र अवश्य होना चाहिए जो सच में समर्पित हों, गंभीर हों और जो आखिरी छोर तक जाने के लिए तैयार हों। उन सारी चीज़ों को देख लेने के बाद वे ऐसा कह सकें, ''यह जो कुछ है उसे मैं शुरू से अंत तक समझ लेना चाहता हूं।''

नीडलमनः गंभीर व्यक्ति वह होगा जिसका बाकी सारी चीज़ों से मोहभंग हो चुका होगा।

कृष्णमूर्तिः मैं इसे मोहभंग होना न कह कर गंभीरता कहूंगा।

नीडलमनः उस चीज़ के होने के लिए एक पूर्व-आवश्यकता?

कृष्णमूर्तिः नहीं, मोहभंग होना नहीं, क्योंकि वह निराशा और कटुता की ओर ले जाता है। मेरे कहने का मतलब है कि हमें उन सारी चीज़ों की जांच-पड़ताल करनी चाहिए जिन्हें

धार्मिक या आध्यात्मिक कहा जाता है; इस बात का पता लगाना चाहिए कि इस सबमें क्या सत्य है या इनमें कुछ सत्यता है भी। या फिर हमें इन सारी चीज़ों को एक तरफ हटाकर बिलकुल नये सिरे से शुरुआत करनी चाहिए और उस सारे बखेड़े व घालमेल में बिलकुल नहीं पड़ना चाहिए।

नीडलमनः मुझे लगता है यही मैं कहना चाहता था पर आपने इसे बेहतर ढंग से कह दिया। लोगों ने उस तरह के प्रयास किये पर उससे कुछ न बना।

कृष्णमूर्तिः 'अन्य लोगों' की बात नहीं, मेरा मतलब है कि मुझे ही तमाम प्रतिज्ञाओं, दिलासों, सारे अनुभवों और सभी रहस्यवादी दावों को फेंक देना होगा। मैं समझता हूं हमें इस तरह शुरुआत करनी होगी जैसे हमें ज़रा भी, कुछ भी, पता नहीं है।

नीडलमनः बहुत ही कठिन है।

कृष्णमूर्तिः नहीं, सर, मैं नहीं समझता यह कठिन है। यह उन लोगों के लिए ही कठिन होगा जिन्होंने दूसरे लोगों के ज्ञान से खुद को भर रखा है।

नीडलमनः क्या ज़्यादातर लोगों के साथ ऐसा ही नहीं है? सैन फ्रैंसिस्को स्टेट में कल मैं अपनी क्लास में बातचीत कर रहा था, विद्यार्थियों से मैंने कहा कि मैं कृष्णमूर्ति का इंटरव्यू लेने जा रहा हूं, और क्या उनके मन में कुछ ऐसे सवाल हैं जिन्हें वे चाहेंगे कि मैं उनसे पूछूं। उनके कई सारे सवाल थे; एक युवक का कहना थाः ''मैंने उनकी किताबें बार-बार पढ़ी हैं लेकिन वह जो बताते हैं मैं नहीं कर पाता।'' इस बात में इतनी साफगोई थी, वह भीतर तक छू गयी और अपनी-सी लगी। ऐसा लगता है एक सूक्ष्म स्तर पर शुरुआत इसी तरह होनी चाहिए; जैसे कि हम कुछ न जानते हों, बस अभी हमने सीखना आरंभ किया हो!

कृष्णमूर्तिः मुझे नहीं लगता कि हम पर्याप्त रूप से शंका कर पाते हैं। आप समझ रहे हैं मैं क्या कहना चाह रहा हूं?

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः हम बस मान लेते हैं, बेवकूफ बन जाते हैं, हम नये-नये अनुभवों के भूखे हैं। कोई दाढ़ी वाला यह कहकर ख़्वाब दिखला देता है कि अगर आप ऐसा-ऐसा करेंगे तो आपको शानदार अनुभूतियां होंगी और उसे आप पचा ले जाते हैं। मुझे तो लगता है कि आपको इस तरह शुरुआत करनी होगी कि ''मैं कुछ भी नहीं जानता''। ज़ाहिर सी बात है कि मैं कैसे औरों पर यकीन कर सकता हूं। अगर एक भी किताब न होती, एक भी गुरु न होता तो आप क्या करते?

नीडलमनः लेकिन हम तो बड़ी आसानी से धोखा खा जाते हैं।

कृष्णमूर्तिः धोखा आप तभी खाते हैं जब कुछ चाहने लगते हैं।

नीडलमनः हां, मैं समझ रहा हूं।

कृष्णमूर्तिः इसलिए आपको कहना होगाः ''मुझे पता लगाना है, हर कदम पर खोजबीन करनी है। मैं खुद को ध ोखा नहीं देना चाहता हूं।'' धोखे का सवाल तभी खड़ा होता है जब मैं कुछ चाहता हूं, जब मैं लोभी होता हूं, जब मैं कहता हूं, ''मेरे सारे अनुभव छिछले हैं, मैं अब कुछ रहस्यमय चाहता हूं।'' तब मैं फंस जाता हूं।

नीडलमनः मुझे लगता है कि आप एक ऐसी अवस्था, एक ऐसे दृष्टिकोण और रुख की बात कर रहे हैं जिसको समझ पाना अपने आप में ही बड़ा कठिन है। मैं खुद को ही उससे काफी दूर पाता हूं, और मुझे पता है मेरे विद्यार्थी भी यही कठिनाई महसूस करते हैं। इसलिए उन्हें, सही या ग़लत, ऐसा लगता है कि उन्हें मदद की ज़रूरत है। शायद वे इसे

ठीक से न समझ पाते हों कि मदद क्या होती है, लेकिन क्या मदद जैसा कुछ होता है?

कृष्णमूर्तिः ''मैं मदद क्यों चाहता हूं?'' क्या आप ऐसा कहेंगे।

नीडलमनः मैं ऐसा कहूंगा कि आपको इसका आभास हो जाता है कि आप खुद को ही धोखा दे रहे हैं, आपको पता ही नहीं है...

कृष्णमूर्तिः यह सीधी सी बात है। मैं खुद को धोखा नहीं देना चाहता – ठीक है? अब मैं यह पता लगाता हूं कि वह कौन सी चीज़ है, वह कौन सी गतिविधि है जो धोखा लाती है। ज़ाहिर है कि जब मैं लोभी होता हूं, जब मैं कुछ चाहता हूं, जब मैं असंतुष्ट होता हूं, तब ऐसा होता है। तो, लोभ, चाहत, असंतोष को ख़त्म करने के बजाय मैं कुछ और पाने के चक्कर में लग जाता हूं।

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः तो मुझे पहले अपने लोभ को समझना होगा। क्या है वह जिसका मुझे लोभ है? क्या इसलिए कि मैं इस संसार से ऊब चुका हूं, कई स्त्रियां मेरे जीवन में आयीं और गयीं, कई कारें मैंने रखीं, रुपया-पैसा मैंने कमाया, और अब मैं कुछ और चाहता हूं।

नीडलमनः मैं समझता हूं कि हम लोभी हैं क्योंकि हम उत्तेजना चाहते हैं, अपनी कैद से बाहर निकलना चाहते हैं, इसलिए हम अपनी निर्धनता को देख नहीं पाते। लेकिन जो प्रश्न मैं आपसे पूछना चाहता हूं, और मुझे मालूम है कि आपने इसका जवाब अपनी वार्ताओं में कई बार दिया है, फिर भी यह सवाल बार-बार बिना रुके सामने आ जाता है, और सवाल यह है कि विश्व की महान परंपराएं सदा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मदद की बात कहती हैं – यह बात

अलग है कि वे परंपराएं विकारग्रस्त हो गयीं, उनको तोड़ा-मरोड़ा गया। उनका कहना है कि 'आप स्वयं ही गुरु हैं', पर इसके साथ ही मदद भी उपलब्ध रहती है।

कृष्णमूर्तिः आपको पता है, सर, 'गुरु' शब्द का क्या मतलब है?

नीडलमनः नहीं, सही-सही मालूम नहीं।

कृष्णमूर्तिः जो संकेत करता है। एक अर्थ यह है। दूसरा अर्थ है जो बोध जगाता है, जो आपके बोझ को हटा देता है। लेकिन वे तो आपका बोझ हटाने की बजाय अपना बोझ आपके सिर पर रख देते हैं।

नीडलमनः ऐसा ही लगता है।

कृष्णमूर्तिः गुरु का एक अर्थ यह भी है जो उस पार ले जाने में आपकी मदद करता है। इस तरह कई अर्थ हैं। जैसे ही कोई गुरु कहता है कि वह जानता है तो आप जान लीजिए कि वह कुछ भी नहीं जानता। क्योंकि वह जो कुछ जानता है वह सब अतीत का है। ज्ञान अतीत है। जब वह कहता है कि वह कुछ जानता है तो वह किसी अनुभव के बारे में सोच रहा है जिससे वह कभी गुज़रा है, जिसे उसने एक महान अनुभव के रूप में देखा-पहचाना है, और वह पहचान उसके अपने पूर्वज्ञान पर ही आधारित है, नहीं तो वह उसे पहचानता कैसे, अतः उसके अनुभव की जड़ें अतीत में ही हैं इसलिए वह वास्तविक नहीं है।

नीडलमनः हां, ज़्यादातर ज्ञान ऐसा ही है।

कृष्णमूर्तिः फिर क्यों हम किसी प्रकार की प्राचीन या आधुनिक परंपरा का मुंह ताकते हैं। देखिये सर, मैं भी आध्यात्मिक, दार्शनिक या मनोवैज्ञानिक किताबों में नहीं झांकता - हम इस सबके बिना ही अपने भीतर काफी गहराई तक जा सकते हैं और हर चीज़ का पता लगा सकते हैं।

सवाल अपने भीतर जाने का है, यह कैसे किया जाए। यह न कर पाने के कारण हम पूछते हैं, ''कृपा कर आप मेरी मदद करेंगे?''

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः और वह व्यक्ति कहता है, 'मैं तुम्हारी मदद करूंगा' और वह आपको कहीं और की सैर कराने लगता है।

नीडलमनः हां, यह उस सवाल को कुछ स्पष्ट कर देता है। मैं एक किताब पढ़ रहा था जिसमें लिखा था 'सत्संग'।

कृष्णमूर्तिः आपको मालूम है इसका क्या अर्थ है?

नीडलमनः बुद्धिमान लोगों का संग।

कृष्णमूर्तिः नहीं, अच्छे लोगों का संग।

नीडलमनः अच्छे लोगों का, ओह!

कृष्णमूर्तिः अच्छे होने पर आप बुद्धिमान होते हैं। ऐसा नहीं कि बुद्धिमान होने की वजह से आप अच्छे हों।

नीडलमनः मैं समझ रहा हूं।

कृष्णमूर्तिः आप अच्छे हैं इसलिए बुद्धिमान भी हैं।

नीडलमनः मैं किसी नतीजे पर पहुंचने के लिए नहीं कह रहा, पर जब हम, मैं और मेरे विद्यार्थी, मैं अपने लिए तो कहूंगा ही, आपको पढ़ते हैं, सुनते हैं, तो हम कहने लगते हैं, ''ओह, मुझे किसी की आवश्यकता नहीं है, मुझे किसी के साथ की ज़रूरत नहीं है''– किंतु यहां भी धोखे की अपार संभावना है।

कृष्णमूर्तिः यह तो होना ही है, क्योंकि आप वक्ता के प्रभाव में आ रहे हैं।

नीडलमनः हां। यह तो सही है। (हंसी)

कृष्णमूर्तिः देखिए श्रीमान, बहुत सरलता से इसे देखें। फर्ज करिए कि न कोई किताब है, न कोई गुरु है, न कोई शिक्षक, तब आप क्या करेंगे? आप बदहवासी, भ्रांति और घोर व्यथा की हालत में हैं तब आप क्या करेंगे? कोई आपकी मदद के लिए नहीं है, ड्रग्स, बेहोशी की दवाएं, संगठित धर्म इत्यादि कुछ भी नहीं हैं, आप क्या करेंगे?

नीडलमनः मैं कल्पना नहीं कर सकता कि मैं क्या करूंगा।

कृष्णमूर्तिः यही बात है।

नीडलमनः शायद तुरंत कुछ करने की भीषण आवश्यकता उस क्षण महसूस हो।

कृष्णमूर्तिः बिलकुल। हम उस तत्काल आवश्यकता को महसूस ही नहीं करते और कहने लगते हैं, ''मेरी कोई न कोई तो मदद कर ही देगा।''

नीडलमनः लेकिन उस स्थिति में ज़्यादातर लोग तो पागल हो जाएंगे।

कृष्णमूर्तिः मैं यकीन से नहीं कह सकता।

नीडलमनः मैं भी यकीन से नहीं कह सकता।

कृष्णमूर्तिः मैं तो बिलकुल नहीं कह सकता। क्योंकि हमने अभी तक किया क्या है? हमने जिन लोगों पर भरोसा किया, जिन धार्मिक संगठनों, शिक्षा आदि का सहारा लिया, उन सभी ने हमें इस भयानक अव्यवस्था में पहुंचाया है। न हमें अपने दुख से छुटकारा मिला, न अपनी पाशविकता से, न अपनी कुरूपता से और न ही झूठे दिखावों से।

नीडलमनः क्या ऐसा हम प्रत्येक के लिए कह सकते हैं? कुछ लोग भिन्न होते हैं। हज़ार धोखा देने वालों में एक बुद्ध भी होता है।

कृष्णमूर्तिः पर वह मेरा सरोकार नहीं, ख़ासकर जब हम यह कह रहे हों कि इसमें इस कदर धोखे की संभावना है।

नीडलमनः तब मुझे यह सवाल करने दीजिए। हमें पता है कि बिना श्रम के शरीर बीमार पड़ जाता है, और इस श्रम को ही हम प्रयत्न कहते हैं। क्या जिसे हम आत्मा कहते हैं उसके लिए कुछ अलग प्रयत्न की आवश्यकता है? आप प्रयत्न के ख़िलाफ़ बोलते हैं लेकिन मनुष्य के समग्र विकास और भलाई के लिए क्या किसी प्रकार के कठिन श्रम की आवश्यकता नहीं है?

कृष्णमूर्तिः कठिन श्रम से आपका क्या मतलब है! शारीरिक श्रम?

नीडलमनः सामान्य तौर पर यही मतलब होता है। दूसरे शब्दों में कामनाओं के ख़िलाफ़ खड़े होना।

कृष्णमूर्तिः अब समझ में आया! हमारे संस्कार, हमारी संस्कृति इसी 'खिलाफ खड़े होने' पर आधारित है – यानी प्रतिरोध की दीवार खड़ी करना। जब हम कहते हैं 'कठिन श्रम', तो हमारा किस तरफ इशारा होता है? आलस्य की तरफ? किसी भी चीज़ के बारे में मुझे प्रयास क्यों करना पड़ता है? क्यों?

नीडलमनः क्योंकि मैं कुछ चाहता हूं।

कृष्णमूर्तिः नहीं। प्रयत्न करने वालों का यह संप्रदाय किस लिए है? ईश्वर, बोध, सत्य तक पहुंचने के लिए मुझे प्रयास क्यों करना पड़ेगा?

नीडलमनः इसके कई जवाब मुमकिन हैं, पर मैं केवल अपने लिए जवाब दे सकता हूं।

कृष्णमूर्तिः वह कहीं भी हो सकता है बस मुझे देखना नहीं आता।

नीडनमनः पर कोई बाधा भी ज़रूर होगी।

कृष्णमूर्तिः कैसे देखें! वह तो यहीं आसपास हो सकता है, किसी फूल के नीचे, कहीं भी। तो पहले मुझे देखना सीखना होगा यह नहीं कि देखने का प्रयास करने लगूं। मुझे यह पता लगाना होगा कि देखा कैसे जाता है।

नीडनमनः हां, पर आपको नहीं लगता कि उस देखने में प्रतिरोध भी हो सकता है?

कृष्णमूर्तिः तब देखने की फ़िक्र छोड़ दीजिए! अगर कोई आपसे आकर कहे, 'मैं देखना नहीं चाहता', आप उसे कैसे देखने के लिए विवश कर सकते हैं?

नीडलमनः नहीं। मैं अपने बारे में बात कर रहा हूं। मैं देखना चाहता हूं।

कृष्णमूर्तिः यदि आप देखना चाहते हैं तो देखने से आपका तात्पर्य क्या है? देखने की कोशिश करने से पहले आप यह पता लगाएं कि देखना होता क्या है। सही है, सर?

नीडलमनः मेरी दृष्टि में वह भी एक प्रयत्न होगा।

कृष्णमूर्तिः नहीं।

नीडलमनः उतने नाज़ुक और महीन तरीके से देखने के लिए। मैं देखना तो चाहता हूं पर यह खोजबीन नहीं करना चाहता कि देखना क्या होता है। मेरे लिए यह बहुत ही बुनियादी बात है। लेकिन इसे जल्दी से कर लेने की इच्छा, इससे पार निकल जाने की ख़्वाहिश, क्या यही प्रतिरोध नहीं है?

कृष्णमूर्तिः एक ऐसी दवा जो इस सबसे जल्दी छुटकारा दिला दे।

नीडलमनः क्या मेरे भीतर कुछ ऐसा है जिसका मुझे अध्ययन करना होगा, जो इस महीन और नाज़ुक मामले का

प्रतिरोध करता है जिसकी आप बात कर रहे हैं? क्या यही काम नहीं है? प्रश्न को इतने मौन भाव से, इतने सूक्ष्म तरीके से पूछना क्या एक कार्य नहीं है? मुझे लगता है कि एक काम यह भी है कि हम उस हिस्से को अनसुना कर दें जो यह कार्य...

कृष्णमूर्तिः तुरंत कर लेना चाहता है।

नीडलमनः पश्चिम में ख़ासकर, या शायद सभी जगह, सभी मनुष्यों के साथ ऐसा होता हो।

कृष्णमूर्तिः मुझे लगता है ऐसा सभी जगह है। ''तुरंत वहां कैसे पहुंचा जाए, बताइये।''

नीडलमनः फिर भी आपका कहना है कि यह एक क्षण में होता है।

कृष्णमूर्तिः ज़ाहिर सी बात है।

नीडलमनः हां, मैं समझता हूं।

कृष्णमूर्तिः सर, प्रयास क्या है? सुबह बिस्तर से उठना जबकि आपकी उठने की कतई इच्छा नहीं है प्रयास है। वह आलस्य किस कारण आता है? नींद की कमी से, ज़रूरत से ज़्यादा खाने से, व्यसनों में लिप्त होने से या किसी और कारण से, और जब आपकी अगली सुबह आंख खुलती है तो आप कहते हैं, 'ओह, ये क्या ज़िंदगी है, मुझे उठना पड़ेगा!' अब एक मिनट रुकिये, इसे समझिये। क्या है आलस्य? क्या यह शारीरिक है या विचार खुद ही में आलसी है?

नीडलमनः इसे मैं नहीं समझ पाता। मुझे कोई और शब्द चाहिए। ''विचार आलसी है?'' मैंने पाया है कि विचार हमेशा एक जैसा होता है।

कृष्णमूर्तिः नहीं, सर। मैं आलसी हूं, मैं उठना नहीं

चाहता, तब उठने के लिए मैं खुद से ज़बरदस्ती करता हूं। इसमें प्रयत्न आ जाता है।

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः मैं *वह* तो चाहता हूं पर मुझे *यह* नहीं चाहिए, इसका मैं प्रतिरोध करता हूं। प्रतिरोध प्रयत्न है। मुझे गुस्सा आता है और मुझे गुस्सा नहीं आना चाहिए – तब प्रतिरोध, प्रयत्न आता है। मुझे किस चीज़ ने आलसी बनाया है?

नीडलमनः उस विचार ने जो कहता है कि मुझे सुबह जल्दी उठना चाहिए।

कृष्णमूर्तिः यही बात है।

नीडलमनः ठीक है।

कृष्णमूर्तिः इसलिए मुझे विचार के पूरे प्रश्न में जाना होगा। यह नहीं मान लेना कि शरीर आलसी है और फिर उसे उठाने के लिए ज़ोर–ज़बरदस्ती करना क्योंकि शरीर की अपनी प्रज्ञा होती है, उसे पता होता है कि कब वह थकान में है और उसे आराम की आवश्यकता है। आज सुबह मैं थका हुआ था; योगासन करने के लिए मैंने चटाई वगैरा सब तैयार कर रखी थी पर शरीर ने कहा – 'नहीं, क्षमा करिये'। तब मैंने कहा – 'ठीक है'। शरीर ने कहा, 'अभी रहने दो, क्योंकि कल तुमने वार्ता की, बहुत से लोगों से मिले, अभी तुम थके हो।' इस पर विचार बीच में आ जाता है – 'तुम्हें उठ जाना चाहिए और व्यायाम करना चाहिए क्योंकि यह तुम्हारे लिए अच्छा है, तुमने इसे रोजाना जारी रखा है और यह तुम्हारे अभ्यास में आ गया है, सुस्ताओ मत, आलसी बन जाओगे, जारी रखो।' जिसका मतलब है कि विचार मुझे आलसी बना रहा है न कि शरीर।

नीडलमनः मैं यह समझ रहा हूं। तो विचार के साथ प्रयास जुड़ा है।

कृष्णमूर्तिः इसलिए कोई प्रयास नहीं! विचार इतना यांत्रिक कैसे है? और क्या सारा-का-सारा विचार यांत्रिक है?

नीडलमनः हां, ठीक, यह वाजिब सवाल है।

कृष्णमूर्तिः क्या ऐसा नहीं है?

नीडलमनः मैं यह नहीं कह सकता कि मैंने इसकी परीक्षा की है।

कृष्णमूर्तिः लेकिन हम कर सकते हैं, सर। इसे बड़ी आसानी से देखा जा सकता है। क्या समस्त विचार यांत्रिक नहीं है? अयांत्रिक, ग़ैरमशीनी अवस्था तो विचार की अनुपस्थिति में ही हो सकती है; विचार की अवहेलना, उसका तिरस्कार नहीं बल्कि उसकी ग़ैरमौजूदगी।

नीडलमनः मैं यह कैसे पता लगाऊं?

कृष्णमूर्तिः अभी पता लगाइए, यह बहुत आसान है। अगर आप चाहें तो इसे अभी कर सकते हैं। विचार यांत्रिक है।

नीडलमनः ऐसा मान लेते हैं।

कृष्णमूर्तिः मानना नहीं। कुछ भी मत मानिए।

नीडलमनः ठीक है।

कृष्णमूर्तिः विचार यांत्रिक है क्योंकि इसे बस दोहराना, अनुसरण करना, तुलना करना ही आता है।

नीडलमनः तुलना करने वाली बात मैं समझ सकता हूं। लेकिन मेरा अनुभव कहता है सारा का सारा विचार ऐसा नहीं है। विचार की गुणवत्ताएं भी हैं।

कृष्णमूर्तिः सचमुच हैं?

नीडलमनः मेरे अनुभव में तो हैं।

कृष्णमूर्तिः आइये पता लगाते हैं। क्या है विचार, सोचना?

नीडलमनः एक विचार है जो बहुत ही सतही ढंग का है, दोहरावभरा, बड़ा ही यांत्रिक, जिसका अपना एक ख़ास ज़ायका है। एक दूसरे ढंग का विचार है जो ज़्यादातर मेरे शरीर से, मेरे संपूर्ण स्व से संबंधित है, इसकी अपनी एक अलग प्रतिध्वनि है।

कृष्णमूर्तिः इसका क्या मतलब हुआ, सर? विचार स्मृति से उपजी प्रतिक्रिया है।

नीडलमनः ठीक है, यह एक परिभाषा है।

कृष्णमूर्तिः नहीं, नहीं, मैं इसे अपने भीतर देख सकता हूं। आज शाम को मुझे उस घर में जाना है, उसकी स्मृति, उसकी दूरी, उसकी डिजाइन, सब कुछ मेरी स्मृति में है, है न?

नीडलमनः हां, वह स्मृति है।

कृष्णमूर्तिः पहले मैं वहां जा चुका हूं और उसकी याद अच्छी तरह से जम गयी है, वहीं से विचार या तो तुरंत या कुछ समय लगाकर प्रतिक्रिया करता है। तो मैं अपने से पूछता हूं – क्या सभी विचार एक जैसे यांत्रिक हैं या कोई ऐसा विचार भी है जो यांत्रिक नहीं है, जो अशाब्दिक है।

नीडलमनः हां, यह ठीक है।

कृष्णमूर्तिः यदि कोई शब्द न हो तो क्या विचार रह सकता है?

नीडलमनः समझ हो सकती है।

कृष्णमूर्तिः रुकिए, सर। वह समझ कैसे आती है? विचार जब तेज़ी से काम कर रहा हो या जब विचार शांत हो?

नीडलमनः जब विचार शांत हो, हां।

कृष्णमूर्तिः समझ का विचार से कोई लेना–देना नहीं है। आप तब तक मीमांसा कर सकते हैं, जो कि विचार की, तर्क

की, प्रक्रिया है, जब तक कि आप यह न कहने लगें, ''मेरी समझ में यह बात नहीं आ रही'' और तब आप मौन हो जाते हैं और तभी आपको दिखाई पड़ता है, ''आह, मेरी समझ में बात आ गयी।'' यह समझ विचार का नतीजा नहीं होती।

नीडलमनः आप किसी ऊर्जा की बात करते हैं जो कारणरहित प्रतीत होती है। हमें कारण-कार्य की ऊर्जा का ही अनुभव होता है जो हमारे जीवन को ढालती है; उस अन्य ऊर्जा का इस ऊर्जा से क्या संबंध है जिससे हम परिचित हैं? क्या है ऊर्जा?

कृष्णमूर्तिः पहली बात है कि क्या ऊर्जा को विभाजित किया जा सकता है?

नीडलमनः मालूम नहीं। आगे कहिए।

कृष्णमूर्तिः इसे अलग-अलग बांटा जा सकता है। एक तो शारीरिक ऊर्जा है, फिर क्रोध आदि की ऊर्जा, ब्रह्मांड की ऊर्जा और मानवीय ऊर्जा, इस प्रकार इसे हम बांट सकते हैं। लेकिन क्या यह सारी की सारी एक ही ऊर्जा नहीं है?

नीडलमनः तर्क की दृष्टि से मैं हां कहूंगा। पर मुझे नहीं मालूम कि ऊर्जा क्या है। कभी-कभार मुझे उस चीज़ का अनुभव होता है जिसे मैं ऊर्जा कहता हूं।

कृष्णमूर्तिः मैं बस यह समझना चाहता हूं कि हम ऊर्जा का इस तरह विभाजन क्यों करते हैं। यदि हम ऐसा न करें तो हम इसे एक अलग दृष्टि से देख सकेंगे। यौन ऊर्जा, शारीरिक ऊर्जा, मानसिक ऊर्जा, मनोवैज्ञानिक ऊर्जा, वैश्विक ऊर्जा, किसी व्यवसायी की ऊर्जा इत्यादि – हम इस तरह का विभाजन क्यों करते हैं? इस विभाजन का कारण क्या है?

नीडलमनः ऐसा लगता है कि हमारे कई हिस्से हैं जो बंटे हुए हैं; शायद यही कारण है कि हम जीवन को भी हिस्सों में

बांट लेते हैं।

कृष्णमूर्तिः क्यों? हमने विश्व को साम्यवाद, समाजवाद, साम्राज्यवाद, कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट, हिंदू, बौद्ध आदि में बांट दिया है, इसके अलावा राष्ट्रीय और भाषा-आधारित विभाजन हैं, हर चीज़ खंड-खंड है। समूचे जीवन को मन ने क्यों विखंडित किया हुआ है?

नीडलमनः मुझे इसका जवाब नहीं मालूम। मुझे समुद्र दिखाई पड़ता है, वृक्ष दिखाई पड़ता है और दोनों अलग-अलग हैं।

कृष्णमूर्तिः नहीं। समुद्र और वृक्ष में भिन्नता है – मुझे पूरी उम्मीद है! – पर वह विभाजन या अलगाव नहीं है।

नीडलमनः नहीं। यह भिन्नता है, विभाजन नहीं।

कृष्णमूर्तिः पर हमारा प्रश्न है कि विभाजन क्यों है, न केवल बाहर बल्कि हमारे भीतर भी।

नीडलमनः यह हमारे भीतर है, यह बड़ा ही दिलचस्प प्रश्न है।

कृष्णमूर्तिः क्योंकि यह हमारे भीतर है, हम इसे बाहर भी ले आते हैं। अब यह विभाजन मेरे अंदर क्यों है? 'मैं' और 'मैं नहीं' का विभाजन। आप समझे? उच्चतर और निम्नतर, आत्मा और निम्न स्व। यह विभाजन क्यों?

नीडलमनः हो सकता है, कम से कम आरंभ में, व्यक्ति को खुद से प्रश्न करने में मदद करने के लिए ऐसा किया गया हो। व्यक्ति के भीतर यह प्रश्न पैदा करने के लिए कि जैसा वह सोच रहा है कि वह जानता है, क्या वह सच में जानता भी है।

कृष्णमूर्तिः क्या वह विभाजन कर के जान पाएगा?

नीडलमनः शायद इस विचार के ज़रिये कि कुछ ऐसा है

जिसे वह नहीं जानता है।

कृष्णमूर्तिः मनुष्य के अंदर विभाजन है – क्यों? इस विभाजन के होने का मूल कारण क्या है, इसका ढांचा क्या है? विचारक और विचार के रूप में मुझे एक विभाजन दिखलाई देता है – ठीक है न?

नीडलमनः मुझे नहीं दिखलाई देता।

कृष्णमूर्तिः हमारे अंदर का विचारक कहता है, ''मुझे उस विचार को काबू में रखना चाहिए, मुझे इस तरह नहीं सोचना चाहिए, मुझे उस तरह सोचना चाहिए।'' तो एक विचारक है जो कहता है कि मुझे ऐसा करना चाहिए या मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए।

नीडलमनः सही है।

कृष्णमूर्तिः यह विभाजन मौजूद है। ''मुझे ऐसा होना चाहिए'' और ''मुझे वैसा नहीं होना चाहिए''। यदि मैं समझ सकूं कि यह विभाजन मेरे अंदर क्यों है – ओह, देखिए, देखिए! उन पहाड़ियों को देखिए! क्या शानदार हैं।

नीडलमनः अद्‌भुत!

कृष्णमूर्तिः अब बताइए, क्या आप कोई विभाजन कर उनको देखते हैं?

नीडलमनः नहीं।

कृष्णमूर्तिः क्यों नहीं?

नीडलमनः वहां कोई 'मैं' नहीं था जो उनके साथ कुछ कर सके।

कृष्णमूर्तिः बस यही बात है। आप उस बारे में कुछ भी नहीं कर सकते। यहां, विचार के साथ, मैं सोचता हूं कि मैं कुछ कर सकता हूं।

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः तो मैं 'जो है' को बदलना चाहता हूं। मैं वहां पर 'जो है' को नहीं बदल सकता, पर सोचता हूं कि अपने भीतर 'जो है' उसे बदल सकता हूं। यह न जानते हुए कि इसे कैसे बदला जाए, मैं हताश, निराश और परेशान हो जाता हूं। मैं कहने लगता हूं, ''मैं नहीं बदल सकता।'' तब मेरे पास बदलाव के लिए ज़रूरी ऊर्जा नहीं बचती।

नीडलमनः व्यक्ति यही कहने लगता है।

कृष्णमूर्तिः इसलिए 'जो है' को बदलने से पहले यह जान लेना निहायत ज़रूरी है कि बदलने वाला है कौन, जो बदलता है वह क्या है।

नीडलमनः कुछएक क्षण होते हैं जब हम उसे महसूस करते हैं, क्षण भर के लिए। वे क्षण गायब हो जाते हैं। एकाध क्षण ऐसे होते हैं जब हमें मालूम होता है कि अपने अंदर 'जो है' को देखने वाला कौन है।

कृष्णमूर्तिः नहीं सर, क्षमा करिए। 'जो है' को बस देख लेना ही काफी है, इसे बदलने की कोशिश नहीं।

नीडलमनः मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूं।

कृष्णमूर्तिः मैं 'जो है' को केवल तभी देख सकता हूं जब देखने वाला यानी द्रष्टा मौजूद न हो। जब आपने उन पहाड़ियों को देखा, तो देखने वाला मौजूद नहीं था।

नीडलमनः मैं आपकी बात से सहमत हूं, हां।

कृष्णमूर्तिः जब आपने 'जो है' को बदलना चाहा केवल तभी द्रष्टा बीच में आया। जैसे ही आपने कहाः मुझे 'जो है' पसंद नहीं है, इसे बदलना ही चाहिए, उसी क्षण द्वंद्व, अलगाव पैदा हो गया। क्या मन 'जो है' को द्रष्टा के बिना देख सकता है? ऐसा हुआ, जब आपने अद्‌भुत प्रकाश से नहायीं उन पहाड़ियों को देखा।

नीडलमनः यह सत्य परम निरपेक्ष सत्य है। जिस क्षण इसका अनुभव होता है भीतर से अहोभाव उठता है, 'हां!' लेकिन हमारा यह भी अनुभव है कि हम इस बात को भूल जाते हैं।

कृष्णमूर्तिः भूल जाइए!

नीडलमनः मेरा मतलब है कि हम फिर से उसे बदलने की कोशिश करने लगते हैं।

कृष्णमूर्तिः भूल जाइए, और फिर नये सिरे से आरंभ करिए।

नीडलमनः आपका आशय जो भी है पर इस परिचर्चा से मदद मिलती है। मुझे अच्छी तरह पता है कि इस परिचर्चा से जो मदद हुई उसके बिना इसे नहीं समझा जा सकता था। मैं उन पहाड़ियों को देख भी लेता और मुमकिन है बिना किसी निर्णय और विचार के, पर मेरे लिए यह कोई ख़ास बात नहीं होती, मैं यह नहीं जान पाता कि यही वह ढंग है जिस तरह मुझे मुक्ति की तरफ देखना चाहिए। मुझे लगता है यही वह प्रश्न है जिस मैं हमेशा रखना चाहता था। शायद मन फिर बीच में आ रहा है और किसी चीज़ को पकड़ कर रखना चाह रहा है, फिर भी लगता है मानव की दशा...

कृष्णमूर्तिः सर, हमने उन पहाड़ियों को देखा, आप उनमें कोई भी परिवर्तन नहीं कर सकते थे, आपने बस उनको देखा; और अपने अपने भीतर देखा, इसके बाद फिर से संघर्ष की शुरुआत हो गयी। एक क्षण के लिए आपने बिना किसी संघर्ष, कलह आदि के देखा। इसके बाद आपको वह ख़ूबसूरत क्षण याद आया और आपने उसको फिर पाना चाहा। ठहरिए सर! आगे बढ़िए। तब क्या होता है? दूसरा झगड़ा शुरू हो जाता है : आपको कुछ मिल गया और आप उसे फिर से पाना चाहते हैं लेकिन आपको मालूम नहीं कि

उसे फिर कैसे हासिल किया जाय। आपको यह भी पता है कि जब आप उसके बारे में सोचते हैं तो वह वैसी नहीं होती। तब आप इस कलह में, झगड़े में पड़ जाते हैं कि, ''मुझे नियंत्रण करना होगा, मुझे कामना नहीं करनी चाहिए'' – ठीक है? जबकि अगर आप कहें, ''ठीक है, वह चला गया, ख़त्म हुआ'', बात वहीं पूरी हो जाती है।

नीडलमनः मुझे यह सीखना होगा।

कृष्णमूर्तिः नहीं, नहीं।

नीडलमनः क्या मुझे सीखना नहीं होगा?

कृष्णमूर्तिः क्या है यहां सीखने को?

नीडलमनः इस संघर्ष की व्यर्थता के बारे में मुझे सीखना होगा।

कृष्णमूर्तिः नहीं। इसमें सीखने के लिए क्या है? आप खुद यह देख सकते हैं कि सौंदर्य का वह क्षण याददाश्त बन जाता है और फिर वही याददाश्त मांग करती है, ''कितना ख़ूबसूरत था वह क्षण, मुझे फिर वह मिलना चाहिए।'' आपको सौंदर्य से कोई मतलब नहीं है, असल में आप सुख के उस सिलसिले को चाहते हैं। सुख और सौंदर्य एक साथ नहीं चल सकते। यदि आप यह समझ जाएं तो बात वहीं खत्म हो जाती है। एक खतरनाक सांप को देख लेने के बाद आप उसके पास कतई नहीं जाएंगे।

नीडलमनः (हंसते हुए) शायद मैंने उसे इस तरह नहीं देखा है इसलिए मैं कुछ नहीं कह सकता।

कृष्णमूर्तिः सवाल तो यही है।

नीडलमनः हां, मैं समझता हूं ऐसा ही है, क्योंकि हम बार-बार वापस वहीं पहुंच जाते हैं।

कृष्णमूर्तिः नहीं। असली बात यही है। मैं उस प्रकाश के सौंदर्य को देखता हूं जो कि सच में असाधारण रूप से सुंदर है, मैं उसे बस देखता हूं। अब मैं उतने ही ध्यान के साथ अपने को देखना चाहता हूं। अनुभूति का एक क्षण ऐसा आता है जो उतना ही ख़ूबसूरत होता है। इसके बाद क्या होता है?

नीडलमनः मैं फिर उसकी कामना करने लगता हूं।

कृष्णमूर्तिः तब मैं उसे हासिल करना चाहता हूं, विकसित करना चाहता हूं, उसका अनुसरण करना चाहता हूं।

नीडलमनः और इसे कैसे देखा, समझा जाय?

कृष्णमूर्तिः ऐसा हो रहा है उतना देखना ही काफी है।

नीडलमनः यही बात है जिसे मैं भूल जाता हूं!

कृष्णमूर्तिः सवाल भूलने का नहीं है।

नीडलमनः इसी बात को मैं गहराई से नहीं समझ पाता कि देखना ही काफी है।

कृष्णमूर्तिः ज़रा ध्यान दीजिए सर। जब आप किसी सांप को देखते हैं तो क्या होता है?

नीडलमनः मैं डर जाता हूं।

कृष्णमूर्तिः नहीं। क्या होता है तब? आप भाग जाते हैं या उसे मार डालते हैं या कुछ और करते हैं। क्यों? क्योंकि आपको पता है कि यह ख़तरनाक है। आप उसके ख़तरे के बारे में सजग हैं। आप एक खड़ी चट्टान पर खड़े हैं, या एक गहरी खाई के ठीक किनारे पर हैं। आप इसके ख़तरे से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं। किसी को आपको बतलाने की ज़रूरत नहीं है। आप सीधे यह देख लेते हैं कि क्या नतीजा होगा।

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः अब, यदि आप सीधे-सीधे यह देखें कि अनुभूति के उस क्षण की सुंदरता को दोहराया नहीं जा सकता तो बात वहीं ख़त्म हो जाती है। लेकिन विचार तो कहता है, ''नहीं, यह ख़त्म नहीं हुआ, उसकी याद तो बची है।'' तब आप क्या कर रहे होते हैं? तब आप उसकी मृत स्मृति के पीछे बह रहे होते हैं न कि उसके जीवित सौंदर्य को जी रहे होते हैं। सही है न? अगर आप इस बात की सच्चाई को देख लें, शब्दों को नहीं बल्कि इसकी सत्यता को, तो बात वहीं समाप्त हो जाती है।

नीडलमनः पर यह देखना, अवलोकन करना, जितना हम सोचते हैं उससे कहीं ज़्यादा विरल है।

कृष्णमूर्तिः यदि मैं उस पल के सौंदर्य को देखता हूं तो उसका वहीं अंत हो जाता है। मैं उसके पीछे नहीं पड़ता। जब मैं उसे चाहने लगता हूं तो वह फिर सुख में बदल जाता है। और उसके न मिलने पर हताशा, पीड़ा और वह सारा कुछ घेरता है। तो मैं कहता हूं, ''ठीक है, समाप्त हुआ।'' इसके बाद क्या होता है?

नीडलमनः माफ करिए, मेरा अनुभव तो कहता है कि दैत्य फिर से जन्म ले लेता है। उसके सैकड़ों-हज़ारों जन्म हैं। (हंसते हुए)

कृष्णमूर्तिः नहीं सर। वह सौंदर्य कब घटित हुआ था?

नीडलमनः जब मैंने बदलने की कोशिश के बिना अवलोकन किया।

कृष्णमूर्तिः जब मन पूर्णतया मौन था।

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः ऐसा ही था न? सही है?

नीडलमनः हां।

कृष्णमूर्तिः जब आपने वहां देखा था तो मन चुपचाप था, वह ऐसा नहीं कह रहा था – ''काश मैं उसे बदल पाता, उसकी कॉपी कर लेता, उसकी फोटो उतार लेता, आदि-आदि।'' आपने बस अवलोकन किया। मन क्रियारत नहीं था। या यूं कहें कि विचार हरकत में नहीं था। लेकिन विचार तुरंत ही हरकत में आ जाता है। अब हमारा सवाल है कि विचार कैसे ख़ामोश रहे। ऐसा कैसे हो कि जब विचार की ज़रूरत हो तो हम उसका उपयोग करें और जब ज़रूरत न हो तो उपयोग न करें।

नीडलमनः हां, इस सवाल में मेरी बहुत अधिक दिलचस्पी है।

कृष्णमूर्तिः यानी, हम विचार की पूजा क्यों करते हैं? विचार असाधारण रूप से इतना महत्त्वपूर्ण क्यों हो गया है?

नीडलमनः ऐसा लगता है कि वह हमारी कामनाओं की पूर्ति कर सकता है; हम भरोसा करते हैं कि विचार के माध्यम से हम संतुष्ट हो सकेंगे।

कृष्णमूर्तिः नहीं, संतुष्टि के कारण नहीं। सारी संस्कृतियों में ज़्यादातर लोगों के साथ विचार इतना अहम क्यों हो गया है?

नीडलमनः प्रायः हम विचार के साथ, अपने विचारों के साथ, अपना तादात्म्य कर लेते हैं। जब मैं अपने बारे में सोचता हूं तो मैं यही सोच रहा होता हूं कि मैं क्या सोचता हूं, मेरी धारणाएं किस प्रकार की हैं, मेरे विश्वास क्या हैं, इस सबके बारे में। क्या आपका मतलब यही है?

कृष्णमूर्तिः ठीक ऐसा नहीं। 'मैं' या 'मैं-नहीं' के साथ तादात्म्य करने के अलावा भी विचार सदा सक्रिय क्यों रहता है?

नीडलमनः ओह, मैं समझा।

कृष्णमूर्तिः विचार हमेशा जानकारी, ज्ञान के क्षेत्र में कार्य करता है। यदि ज्ञान न हो तो विचार नहीं होगा। विचार सदा ज्ञात के क्षेत्र में काम करता है। चाहे वह यांत्रिक हो, अशाब्दिक हो या कुछ और, वह सदा अतीत में ही काम करता है। इसीलिए अतीत ही मेरा जीवन है क्योंकि यह पुरानी जानकारी, पुराने अनुभव, पुरानी स्मृतियों, सुख, पीड़ा, भय आदि पर आधारित रहता है – यह सारा-का-सारा अतीत है। और उस अतीत से मैं भविष्य को प्रक्षेपित करता हूं, यानी विचार भविष्य को प्रक्षेपित करता है। इस तरह विचार अतीत और भविष्य के बीच झूलता रहता है। हर समय वह कहता रहता है, ''मुझे यह करना चाहिए, वह नहीं, मुझे ठीक से बरताव करना चाहिए था।'' यह सब वह क्यों कर रहा है?

नीडलमनः मुझे नहीं मालूम। आदतवश?

कृष्णमूर्तिः आदत। ठीक है। आगे बढ़िए। आइए पता लगाएं। आदतवश?

नीडलमनः आदत में सुख मिलता है।

कृष्णमूर्तिः आदत, सुख, पीड़ा।

नीडलमनः अपनी सुरक्षा के लिए। पीड़ा से, हां।

कृष्णमूर्तिः हमेशा यह उसी दायरे में काम करता है। क्यों?

नीडलमनः क्योंकि इसे कुछ और बेहतर पता ही नहीं है।

कृष्णमूर्तिः न, न। क्या विचार किसी और क्षेत्र में क्रियाशील हो सकता है?

नीडलमनः उस तरह का विचार, नहीं।

कृष्णमूर्तिः नहीं, कोई विशेष ढंग का विचार नहीं। विचार क्या ज्ञात के क्षेत्र के सिवा कहीं और कार्य कर सकता है?

नीडलमनः नहीं।

कृष्णमूर्तिः स्पष्ट है कि नहीं। यह ऐसी जगह काम नहीं कर सकता जिसके बारे में मुझे कुछ पता न हो; यह बस ज्ञात के क्षेत्र में ही कार्य कर सकता है। अब यह यहां भी क्यों काम करने लगता है? यही मुख्य बात है – क्यों? क्योंकि मुझे विचार के सिवाय कुछ पता ही नहीं है। उसमें सुरक्षा है, बचाव है। मुझे बस इतना ही पता है। तो विचार केवल ज्ञात के क्षेत्र में ही कार्य कर सकता है। और जब वह इस सबसे थक जाता है तो बाहर कुछ और तलाश करता है। लेकिन वह जो कुछ भी तलाश करता है वह ज्ञात ही होता है। उसके भगवान, उसकी दिव्य दृष्टियां, आध्यात्मिक अवस्थाएं – वह सब ज्ञात–अतीत से ज्ञात–भविष्य में प्रक्षेपित किया जा रहा होता है। इस तरह विचार सदा इसी क्षेत्र में काम किया करता है।

नीडलमनः हां, मैं समझ सकता हूं।

कृष्णमूर्तिः इसलिए विचार सदा एक कारागार में काम करता है। वह उसे स्वतंत्रता का, सौंदर्य का, या मनचाहा कोई भी नाम दे सकता है! लेकिन रहता वह कंटीले तारों के घेरे में ही है। अब मैं यह पता लगाना चाहता हूं कि विचार की क्या इसके अलावा कोई और भूमिका हो सकती है। विचार की तब कोई भूमिका नहीं होती जब मैं कहता हूं, ''मैं नहीं जानता'', ''मैं सच में नहीं जानता''। ठीक?

नीडलमनः फिलहाल के लिए।

कृष्णमूर्तिः मुझे सही में नहीं मालूम। मुझे बस यही मालूम है, और मुझे सच में नहीं पता कि विचार इसके अलावा किसी और क्षेत्र में काम कर सकता है या नहीं। मैं वास्तव में नहीं जानता। जब मैं कहता हूं कि ''मैं नहीं जानता'', जिसका यह मतलब नहीं कि मैं जानने की प्रतीक्षा कर रहा हूं; जब मैं

कहता हूं मुझे सच में नहीं पता, तब क्या होता है? मैं सीढ़ी के नीचे उतर आता हूं। मैं पूरी तरह विनम्र हो जाता हूं, मन पूरी तरह विनीत हो जाता है।

अब 'न जानने' की यह अवस्था ही प्रज्ञा है। तब वह ज्ञात के क्षेत्र में काम कर सकता है, और यदि वह चाहे तो उसे कहीं और भी काम करने की स्वतंत्रता होती है।

कैलिफोर्निया, 26 मार्च, 1971

द अवेकनिंग ऑफ इंटैलिजेंस
'द रोल ऑफ द टीचर'
हिंदी अनुवाद : मुकेश

कॉपीराइट सूचना
जे. कृष्णमूर्ति के उद्धरण अंतर्राष्ट्रीय कॉपीराइट नियम के अंतर्गत संरक्षित हैं तथा सर्वाधिकारी की लिखित पूर्वानुमति के बिना किसी भी रूप में पुनः प्रस्तुत नहीं किये जा सकते हैं। सन् 1968 के पूर्व की कृष्णमूर्ति की रचनाओं का कॉपीराइट कृष्णमूर्ति फाउंडेशन ऑफ अमेरिका, ओहाय, कैलीफोर्निया का है। सन् 1968 के बाद की रचनाओं का कॉपीराइट कृष्णमूर्ति फाउंडेशन ट्रस्ट, ब्रॉकवुड पार्क, इंग्लैंड का है।

खंड –2

जे. कृष्णमूर्ति मुम्बई-गुजरात सम्मेलन-2008

एक कौतुक पूर्ण आलोचनात्मक अवलोकन

मानव चेतना में परम की चाह सदा से रही है। कृष्णजी की वाणी बीज रूप में ऐसी चेतनाओं के अंतस्तल में आ पड़ी। कुछ चेतनाओं में अंतर्दाह के कारण यह बीज प्रस्फुटन प्रक्रिया में है, तो किन्हीं में आकुलता की ऊष्मा के अभाव के कारण यह टूट नहीं पा रहा है। यह बीज टूटकर कैसे विराटत्व की ओर विकासमान हो, इसी सनातन सरोकार को चेतन-अवचेतन में संभाले कुछ व्यक्तियों का तीथल में दिनांक 29 जनवरी से 1 फरवरी, 08 तक मिलना हुआ। इस मिलन का आयोजन कृष्णमूर्ति गुजरात सम्मेलन कमेटी ने किया। बातचीत की भाषा हिंदी रखी गयी। विषय था-बिना समस्या क्या जीवन जिया जा सकता है? समस्या से घिरा मन कंपता हुआ चैतन्य है। निष्कंप चैतन्य में एक अनबंटी ऊर्जा की सर्जना होती है। बिना उस ऊर्जा के मन के आदिम-अनादि अंधेरे से गुज़रना और पार होना संभव नहीं होता।

बलसाड़ से तीथल को आने वाली सड़क अपने दाहिने किनारे शांति निकेतन, शांति धाम आदि को छूती हुई शांति कुंज तक आकर पश्चिम को मुड़ जाती है और सागर तक जाकर समाप्त हो जाती है। कुछ ही दूर, दक्खिन में एक बहुपूजित भव्य मंदिर है। अचेतन अवसाद से आक्रांत मन कैसे आस्था का अवलंबन लेता है, वह उस मंदिर परिसर में भी अभिव्यक्ति पा रहा था। भय-भारित यह भक्ति, शांति कुंज में कभी-कभी सुनाई पड़ते एक प्रख्यात गुरु के टेप प्रवचन, शांति निकेतन में कष्ट साध्य साधना का अलक्षित आधुनिकीकरण, उन सबका समवेत स्वर एक अनोखे भाव-गीत तरह सुनाई पड़ता है।

पूर्वाह्न में श्री पी. कृष्णा और अपराह्न में राजेश जी का संबोधन होता था। बीच-बीच में कीर्तिचंद्र जी का साधक मन अपनी जिज्ञासा के साथ उपस्थित होता रहता था।

मन सुखी होने के प्रयास में कई अन्तर्विरोधों एवं असंगतियों को स्वयं पैदा करता है और परिणाम में जब दुख द्वंद्व मिलता है तो

उससे मुक्त होने की चिंता में अनजाने नये अंतर्विरोधों का शिकार होता है और उस तरह न समाप्त होने वाले एक दुश्चक्र में अपने को घिरा पाता है। वक्ताओं के संबोधन एवं संवाद में कुछ ऐसी ही बात उभर कर आई। इसके अतिरिक्त मन के कुछ दुर्लक्ष्य ढंग-ढांचों का संधान भी हुआ।

सत्य की खोज में एक विशेष दिशा या दशा में श्रम साधना का जो एक प्रायोजन होता है, उसकी नितांत निरर्थकता की प्रतीति के पूर्व साधक मन को क्षत-विक्षत होकर निःस्व, निस्तब्ध हो जाना होता है। उस निस्तब्धता तक आने में मन कई तरह से कई तल पर अपनी ही क्रिया के कोलाहल को जीवंतता मानता है, जीवंतता की उस भ्रांति पर यह सम्मेलन अपनी अवलोकन दशष्टि नहीं दे पाया। प्रत्येक क्षण के गुह्य गर्भ में संचित आदिम-अधुनातन मन की वियोग-व्यथा की अनुगूंज भी उस सम्मेलन में नहीं सुनाई दी। जब कई व्यक्तियों का वैयक्तिक वैशिष्ट्य अपने चरम पर होता है, तब उस उत्कर्ष बिंदु पर व्यक्ति विदा हो जाता है, मात्र आकुलता शेष रह जाती है। आर्त्त हृदय के इसी क्रंदन में 'चिन्मय' की 'करुणा' आविर्भूत होती है। प्रत्येक व्यक्ति के उस उत्कर्ष के उन्नयन के लिए जो अवकाश चाहिए, जो स्वयं की पहल और परख चाहिए, इस सम्मेलन में उसका अभाव दिखा। 'प्रवचन' के प्रवाह में 'परख' जैसे डूब गयी हो, निष्क्रिय श्रवण और स्वीकृति के भार तले 'पृच्छा' दब सी गयी हो, ऐसा भी प्रतीत हुआ। कुछ नाटकीय जिज्ञासाएं भी आयीं, पर उनमें अभ्यंतर के अनावरण की बनिस्बत अभिव्यक्ति में आनंद लेने की अभिवृत्ति अधिक थी।

–आदित्य नारायण, भभुआ (बिहार)

कृष्णमूर्ति की रचनाओं का हिंदी में अनुवाद

यदि आप जे. कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के हिंदी अनुवाद से जुड़ने के इच्छुक हैं और कम्प्यूटर पर सीधे हिंदी में अनुवाद कर सकते हैं तो हमें ईमेल के ज़रिये इस पते पर संपर्क करें : tpcrajghat@gmail.com

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया
मराठी शिविर
दिनांक : 22 – 27 मई, 2008
विषय : परिवर्तनशील मन

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया
वार्षिक गैदरिंग
दिनांक : 18 – 22 नवंबर, 2008
स्थान : कृष्णमूर्ति अध्ययन केंद्र सह्याद्री, पुणे
मराठी गैदरिंग एवं वार्षिक पब्लिक गैदरिंग में भाग लेने के लिए संपर्क करें: कृष्णमूर्ति अध्ययन केंद्र सह्याद्री, पोस्ट तिवई हिल्स, तालुका – खेड (राजगुरुनगर) जिला पुणे–410 513 फोनः 02135–288772, 288348
ईमेलः kscskfi@gmail.com वेबसाइटः www.kscskfi.com

सानेन गैदरिंग
दिनांक : 2 – 16 अगस्त, 2008

सानेन, स्विट्जरलैंड में होने वाली वार्षिक गैदरिंग का कार्यक्रम इस प्रकार हैः
2nd to 9th August
Theme: Is Individuality a reality or an illusion?
9th to 16th August
Theme: Are we driven by the pursuit of pleasure and the idea of happiness?
भाग लेने के लिए संपर्क करें:
Gisèle Balleys, 7A, ch. Floraire , 1225 Chêne-Bourg/Geneva
Switzerland **Tel.:** +41-22-349-6674 or +41-27-787-1335
e-mail: giseleballeys@hotmail.com web: www.kinfonet.org

आवश्यकताएं

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, रूरल सेंटर के 'संजीवन हॉस्पीटल' में एक महिला डॉक्टर एवं एक पुरुष डॉक्टर की आवश्यकता है। रूरल सेंटर के ही 'अच्युत पटवर्धन स्कूल' में एक प्रिंसिपल की आवश्यकता है। निर्धन ग्रामवासियों की सेवा करने के इच्छुक व्यक्ति आवेदन कर सकते हैं। सेवानिवृत्त व्यक्ति भी आवेदन कर सकते हैं। आवेदन इस पते पर भेजें: डायरेक्टर, रूरल सेंटर, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट फोर्ट, वाराणसी 221 001 E-mail: kfircvns@sify.com

हिंदी में उपलब्ध कृष्णमूर्ति की कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

1. ज्ञात से मुक्ति	रु. 100.00
2. ध्यान	रु. 40.00
3. हिंसा से परे	रु. 90.00
4. गरुड़ की उड़ान	रु. 70.00
5. संस्कृति का प्रश्न	रु. 50.00
6. शिक्षा एवं जीवन का तात्पर्य	रु. 60.00
7. शिक्षा संवाद	रु. 75.00
8. स्कूलों के नाम पत्र	रु. 60.00
9. स्कूलों को पत्र, भाग–2	रु. 40.00
10. आमूल क्रांति की आवश्यकता	रु. 60.00
11. सुखी वही जो कुछ नहीं है	रु. 25.00
12. वाशिंगटन वार्ताएँ	रु. 25.00
13. अंतिम वार्ताएँ	रु. 70.00
14. सत्य एक पथहीन भूमि है	रु. 10.00
15. मृत्यु और उसके बाद	रु. 40.00
16. जीवन भाष्य–1	रु. 70.00
17. जीवन भाष्य–2	रु. 70.00
18. जीवन भाष्य–3	रु. 80.00
19. ईश्वर क्या है	रु. 125.00
20. शिक्षा क्या है	रु. 175.00
21. ध्यान (नया परिवर्धित संस्करण)	रु. 125.00
22. आपको अपने जीवन में क्या करना है?	रु. 175.00
23. प्रथम और अंतिम मुक्ति (द्विभाषी संस्करण)	रु. 500.00

जे. कृष्णमूर्ति प्रज्ञा परिषद्

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट फोर्ट, वाराणसी–221001

ईमेलः kcentrevns@satyam.net.in फोनः 0542–2430289, 2430353

स्वामी 'कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया' के लिए प्रकाशक, मुद्रक प्रो. पी. कृष्णा द्वारा सत्तनाम प्रिंटिंग प्रेस, एस–1/208 के–1 नयी बस्ती, पांडेयपुर, वाराणसी 221 002 से मुद्रित एवं कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट फोर्ट, वाराणसी 221 001 (उ. प्र.) से प्रकाशित; संपादक : कृष्णनाथ